औरत औरत का सहारा बने

सुहास कुमार

''जैसे ही नव-विवाहिता की डोली दरवाज़े पर उतरती है, सबसे पहले औरतें ही उसके यहां से आए सामान पर टीका टिप्पणी करती हैं। यह बहुत कम होता है कि पुरुष वर्ग से यह उलाहना सुनने को मिले।''

''ससुराल में महिलाएं ही सबसे पहले नव-वधू का निरादर शुरू करती हैं। उसके पति के कान भरती हैं। उसे मज़बूर करती हैं कि वह पत्नी के साथ बुरा सलूक करें।''

—सुरेन्द्र कु. त्रिपाठी, प्रेरक

बेटियां ही पैदा होती हैं तो सबसे ज्यादा उलाहने सास ही सुनाती है।

मर्दों से भी दो पग आगे बढ़ जाती है
सच है औरत ही औरत को तड़पाती है
सास बन ज्यों बहू से बदला लेती है
जितने ज़ुल्म सहे दुगुने देती है
बेटियों को बोझ मान पालती
पीढ़ी दर पीढ़ी यही सिलसिला चलाती

—मुकुल लाल, बनहरा

जब भी हम नारी शोषण व अत्याचार की बात करते हैं सबसे बड़ा तमाचा हमारे मुंह पर यह पड़ता है कि औरत ही औरत की सबसे बड़ी दुश्मन है। आप कितनी ही सफाई दें कि इसका कारण पुरुष प्रधान सामाजिक तंत्र है। औरत को ताक़त व मान सम्मान एक पुत्र की माता होने के नाते ही मिलता है। यह बात किसी के पल्ले नहीं पड़ती। कारण यह है कि इस सामाजिक ढांचे को उसी तरह चलाए जाने के लिए जितना पुरुष ज़िम्मेदार है उतना ही नारी भी, शायद उससे भी ज्यादा।

कुछ ज्वलंत सवाल

आज हर औरत को ठंडे दिमाग़ से सोचने की ज़रूरत है कि ऊपर लिखी बातों में कितनी सच्चाई है। अगर ये बातें सच हैं तो क्या हम अपना सामाजिक ढांचा इसी तरह चलने देना चाहती हैं। क्या हर मां बेटी से ज्यादा बेटे को प्रधानता देती रहेगी? क्या बेटे पर ही प्यार दुलार लुटाती रहेगी? बेटी के प्यार को ठुकराकर बेटे-बहू के हाथों उपेक्षित होना पसंद करेगी? क्या सास-ननद सदा बहू को परेशान करती रहेंगी। बेटी के हाथ पीले कर अपने को उसके प्रति पूरी ज़िम्मेदारी से मुक्त समझेंगी?

बेटी-बेटा दोनों ही एक कोख से जन्म लेते हैं। प्रकृति ने दोनों को कुछ ऐसे पूरक गुण दिए हैं जिनसे सृष्टि आगे चलती रहे। उसने दोनों में से किसी एक को बेहतर और दूसरे को कम अच्छा नहीं बनाया है। यह हमारे समाज की देन है कि

शोषण या सहारा ?

स्त्री का मन एक हीन-भावना से भर जाता है। स्त्री स्वयं अपने गुणों को दोष, अपनी ताकत को कमज़ोरी के रूप में देखने लगती है।

चक्रव्यूह से कैसे निकलें?

यह लिंग-भेदभाव की एक ऐसी सामाजिक प्रक्रिया है जो बच्चे के पैदा होने के समय से शुरू हो जाती है। बेटी के स्वाभाविक गुणों का विकास होने देने के बजाए हम उन्हें दबाना चाहते हैं। इसलिए सबसे पहले हमें अपनी सोच बदलनी होगी।

बेटी को बेटे के बराबर ही स्वस्थ विकास के अवसर दें। उसको भी उतना ही समर्थ बनाएं तभी हमारे मनों से उसके बोझ होने की भावना निकलेगी। समर्थ बेटी समर्थ बेटे से ज्यादा मां-बाप का सहारा बन सकती है। आदर्श पत्नी और आदर्श मां से परे भी वह कुछ है। क्या उसकी पहचान हम सिर्फ इन रिश्तों के सहारे ही चाहते हैं?

बहू के घर में आते ही सास-ससुर, ननद-देवर, जेठ-जिठानी सब उस पर अपना अधिकार समझने लगते हैं। एक औसत हिंदुस्तानी परिवार में बहू से अपेक्षाओं की सीमा नहीं रहती। यही नहीं कि उससे सिर्फ पूरे परिवार की देखभाल की आशा की जाती है बल्कि उसके आराम, उसकी देखभाल के प्रति कोई भी अपनी कुछ ज़िम्मेदारी नहीं समझता। उसके हिस्से में ताने, शिकवे शिकायतें ही आती हैं। क्या इस सोच को बदला नहीं जा सकता ?

क्या ही अच्छा हो यदि बहू बीमार पड़े या थक जाए तो उसको स्नेह भरी देखभाल मिले।

ब्याह के बाद बहू के रूप में घर का एक सदस्य बढ़ जाता है। अगर गहराई से सोचें तो पाएंगे कि घर में उसका बहुत योगदान रहता है। अगर घर का कुछ धंधा या व्यवसाय है तो वह श्रम वहां भी लगाती है। घर का खर्च पूरा न पड़े तो बाहर जाकर भी काम करती है। फिर क्यों लड़के के घरवाले संग में दहेज़ की कामना करते हैं? क्यों उसे हीन भावना से भर देने वाली इस प्रथा को लड़के व लड़की दोनों के माता-पिता चलाए जा रहे हैं? लड़की को जायदाद में हिस्सा नहीं देंगे, लेकिन उसके ब्याह में हैसियत से ज्यादा खर्च करने को तैयार रहते हैं?

अपना हित समझें

औरतों को सोच-समझकर, अपने व्यापक हितों को देखकर ही परंपराएं व रीति रिवाज़ चलाने चाहिए। अगर कहीं कुछ गलत, अपने को दुख पहुंचाने वाला, अपनी स्थिति को हीन बनाने वाला रिवाज़ लगे तो ज़रूरी नहीं है कि हम उसे चलाती ही जाएं। बेटी को बोझ नहीं, सहारा मानें। बहू को प्रतिद्वंद्वी नहीं, सहयोगी मानें।

हम में से कम ही यह बात साफ़ तौर पर देख पाते हैं कि पुरुषों में अपने आपसी हितों की रक्षा के लिए एक गुटबंदी है। काम के क्षेत्र में किसी स्त्री को आगे बढ़ता तो वे सह ही नहीं पाते हैं। यह जानते हुए भी कि उनके पुरुष सहयोगी ने स्त्री सहयोगी से छेड़छाड़ की होगी कभी स्त्री सहयोगी का पक्ष नहीं लेंगे।

जब तक औरत औरत को सहारा नहीं देगी उसकी स्थिति में सुधार नहीं होगा। हम औरतें अपने व्यवहार से पुरुषों के ही हाथ और मज़बूत करती हैं। इस पर सोचने व अमल करने की ज़रूरत है। □

इनसे सबक लें

प्रेमवती के पति की मौत एक दुर्घटना में हो गई। वह दुख में डूबी थी। ससुराल वालों ने उससे कुछ कागजों पर दस्तखत करवा लिए। उसको मिलने वाला रुपया-पैसा उन लोगों ने हथिया लिया। थोड़े दिनों बाद ही प्रेमवती व उसकी 5 साल की बेटी को बहुत कष्ट दिए जाने लगे। एक दिन प्रेमवती के हाथ उसके पति के बीमे का कागज लग गया।

प्रेमवती अपनी बेटी तथा वह कागज लेकर दूसरे शहर अपनी सहेली के पास पहुंची। सहेली ने उसे कुछ दिन पास रखा। फिर किराए के कमरे का इंतजाम किया। बीमे की रकम मिलने तक खर्चा चलाने व सिलाई की मशीन खरीदने के लिए रुपया उधार दिया। तीन महीने में प्रेमवती ने सिलाई सीख ली। सहेली की मदद से काम भी मिलने लगा। बाद में सहेली की मदद से उसे एक सरकारी नौकरी भी मिल गई। मामूली पद की ही सही, पर एक स्थाई नौकरी थी। अब वह बेटी को अच्छे स्कूल में पढ़ा रही है व सम्मान की ज़िंदगी बिता रही है। एक औरत की मदद से ही यह संभव हो सका।

× × ×

मेरे एक ममेरे भाई हैं। उनके दो बेटे थे। बड़े बेटे ने प्रेम-विवाह किया। बदकिस्मती से एक साल के भीतर ही बेटे की दुर्घटना में मृत्यु हो गई। भाई-भाभी के दुख की कल्पना की जा सकती है मगर उन्होंने एक बार भी बहू को कोसा नहीं। भाभी ने बहू की मां से कहा, 'अब यह हमारी बहू नहीं बेटी है। इसकी दुबारा शादी हम करेंगे।' साल भर के भीतर अपनी बहू की मर्ज़ी से उन्होंने उसकी शादी अपने दूसरे बेटे, जो बड़े बेटे से केवल एक साल छोटा था और देखने में हूबहू बड़े बेटे की तरह था कर दी। एक जवान लड़की का जीवन संवर गया। इन सब फैसलों में भाभी की प्रमुख भूमिका रही।

× × ×

सुलेखा के घर सत्तो काम करती थी। उसके दो छोटे बच्चे भी थे। एक लड़की 10 साल की तथा बेटा 7 साल का। एक दिन वह सुलेखा के पास साफ़ कपड़े पहन, हाथ में कापी पेंसिल लेकर आई और बोली, "बीबी जी, इस साल मैंने हाई स्कूल की परीक्षा देने का तय किया है।"

सुलेखा को ताज्जुब में पड़ा देख कर बोली—"क्यों, क्या मैं अब पढ़ नहीं सकती।"

सुलेखा—"नहीं, यह बात नहीं है। घर-गृहस्थी व कामकाज के साथ यह सब कर पाओगी?"

सत्तो—"दीदी, इस साल एक अच्छा अवसर मिल रहा है। महिला वर्ष के उपलक्ष में सिलाई कढ़ाई आदि का एक नया विषय जोड़ा गया है। गृह-विज्ञान, हिंदी और नागरिक शास्त्र लेकर मैं परीक्षा दे सकूंगी। विषय भी इस बार सिर्फ चार ही लेने होंगे।"

सुलेखा ने न केवल उसकी परीक्षा की फीस दी, परीक्षा की तैयारी करवाई। काम से समय-समय पर छुट्टी देकर पूरी मदद की। उन दोनों की खुशी का ठिकाना नहीं था जब सत्तो दूसरी श्रेणी में पास हो गई। पड़ोसियों ने दोनों को सम्मान की नज़र से देखा। अब सत्तो एक प्राइमरी स्कूल में पढ़ा रही है। □

स्त्री का मन एक हीन-भावना से भर जाता है। स्त्री स्वयं अपने गुणों को दोष, अपनी ताकत को कमज़ोरी के रूप में देखने लगती है।

चक्रव्यूह से कैसे निकलें?

यह लिंग-भेदभाव की एक ऐसी सामाजिक प्रक्रिया है जो बच्चे के पैदा होने के समय से शुरू हो जाती है। बेटी के स्वाभाविक गुणों का विकास होने देने के बजाए हम उन्हें दबाना चाहते हैं। इसलिए सबसे पहले हमें अपनी सोच बदलनी होगी।

बेटी को बेटे के बराबर ही स्वस्थ विकास के अवसर दें। उसको भी उतना ही समर्थ बनाएं तभी हमारे मनों से उसके बोझ होने की भावना निकलेगी। समर्थ बेटी समर्थ बेटे से ज्यादा मां-बाप का सहारा बन सकती है। आदर्श पत्नी और आदर्श मां से परे भी वह कुछ है। क्या उसकी पहचान हम सिर्फ इन रिश्तों के सहारे ही चाहते हैं?

बहू के घर में आते ही सास-ससुर, ननद-देवर, जेठ-जिठानी सब उस पर अपना अधिकार समझने लगते हैं। एक औसत हिंदुस्तानी परिवार में बहू से अपेक्षाओं की सीमा नहीं रहती। यही नहीं कि उससे सिर्फ पूरे परिवार की देखभाल की आशा की जाती है बल्कि उसके आराम, उसकी देखभाल के प्रति कोई भी अपनी कुछ ज़िम्मेदारी नहीं समझता। उसके हिस्से में ताने, शिकवे शिकायतें ही आती हैं। क्या इस सोच को बदला नहीं जा सकता ?

क्या ही अच्छा हो यदि बहू बीमार पड़े या थक जाए तो उसको स्नेह भरी देखभाल मिले।

ब्याह के बाद बहू के रूप में घर का एक सदस्य बढ़ जाता है। अगर गहराई से सोचें तो पाएंगे कि घर में उसका बहुत योगदान रहता है। अगर घर का कुछ धंधा या व्यवसाय है तो वह श्रम वहां भी लगाती है। घर का खर्च पूरा न पड़े तो बाहर जाकर भी काम करती है। फिर क्यों लड़के के घरवाले संग में दहेज़ की कामना करते हैं? क्यों उसे हीन भावना से भर देने वाली इस प्रथा को लड़के व लड़की दोनों के माता-पिता चलाए जा रहे हैं? लड़की को जायदाद में हिस्सा नहीं देंगे, लेकिन उसके ब्याह में हैसियत से ज्यादा खर्च करने को तैयार रहते हैं?

अपना हित समझें

औरतों को सोच-समझकर, अपने व्यापक हितों को देखकर ही परंपराएं व रीति रिवाज़ चलाने चाहिए। अगर कहीं कुछ गलत, अपने को दुख पहुंचाने वाला, अपनी स्थिति को हीन बनाने वाला रिवाज़ लगे तो ज़रूरी नहीं है कि हम उसे चलाती ही जाएं। बेटी को बोझ नहीं, सहारा मानें। बहू को प्रतिद्वंद्वी नहीं, सहयोगी मानें।

हम में से कम ही यह बात साफ़ तौर पर देख पाते हैं कि पुरुषों में अपने आपसी हितों की रक्षा के लिए एक गुटबंदी है। काम के क्षेत्र में किसी स्त्री को आगे बढ़ता तो वे सह ही नहीं पाते हैं। यह जानते हुए भी कि उनके पुरुष सहयोगी ने स्त्री सहयोगी से छेड़छाड़ की होगी कभी स्त्री सहयोगी का पक्ष नहीं लेंगे।

जब तक औरत औरत को सहारा नहीं देगी उसकी स्थिति में सुधार नहीं होगा। हम औरतें अपने व्यवहार से पुरुषों के ही हाथ और मज़बूत करती हैं। इस पर सोचने व अमल करने की ज़रूरत है। □

इनसे सबक लें

प्रेमवती के पति की मौत एक दुर्घटना में हो गई। वह दुख में डूबी थी। ससुराल वालों ने उससे कुछ कागजों पर दस्तखत करवा लिए। उसको मिलने वाला रुपया-पैसा उन लोगों ने हथिया लिया। थोड़े दिनों बाद ही प्रेमवती व उसकी 5 साल की बेटी को बहुत कष्ट दिए जाने लगे। एक दिन प्रेमवती के हाथ उसके पति के बीमे का कागज लग गया।

प्रेमवती अपनी बेटी तथा वह कागज लेकर दूसरे शहर अपनी सहेली के पास पहुंची। सहेली ने उसे कुछ दिन पास रखा। फिर किराए के कमरे का इंतजाम किया। बीमे की रकम मिलने तक खर्चा चलाने व सिलाई की मशीन खरीदने के लिए रुपया उधार दिया। तीन महीने में प्रेमवती ने सिलाई सीख ली। सहेली की मदद से काम भी मिलने लगा। बाद में सहेली की मदद से उसे एक सरकारी नौकरी भी मिल गई। मामूली पद की ही सही, पर एक स्थाई नौकरी थी। अब वह बेटी को अच्छे स्कूल में पढ़ा रही है व सम्मान की ज़िंदगी बिता रही है। एक औरत की मदद से ही यह संभव हो सका।

× × ×

मेरे एक ममेरे भाई हैं। उनके दो बेटे थे। बड़े बेटे ने प्रेम-विवाह किया। बदकिस्मती से एक साल के भीतर ही बेटे की दुर्घटना में मृत्यु हो गई। भाई-भाभी के दुख की कल्पना की जा सकती है मगर उन्होंने एक बार भी बहू को कोसा नहीं। भाभी ने बहू की मां से कहा, 'अब यह हमारी बहू नहीं बेटी है। इसकी दुबारा शादी हम करेंगे।' साल भर के भीतर अपनी बहू की मर्ज़ी से उन्होंने उसकी शादी अपने दूसरे बेटे, जो बड़े बेटे से केवल एक साल छोटा था और देखने में हूबहू बड़े बेटे की तरह था कर दी। एक जवान लड़की का जीवन संवर गया। इन सब फैसलों में भाभी की प्रमुख भूमिका रही।

× × ×

सुलेखा के घर सत्तो काम करती थी। उसके दो छोटे बच्चे भी थे। एक लड़की 10 साल की तथा बेटा 7 साल का। एक दिन वह सुलेखा के पास साफ़ कपड़े पहन, हाथ में कापी पेंसिल लेकर आई और बोली, "बीबी जी, इस साल मैंने हाई स्कूल की परीक्षा देने का तय किया है।"

सुलेखा को ताज्जुब में पड़ा देख कर बोली—"क्यों, क्या मैं अब पढ़ नहीं सकती।"

सुलेखा—"नहीं, यह बात नहीं है। घर-गृहस्थी व कामकाज के साथ यह सब कर पाओगी?"

सत्तो—"दीदी, इस साल एक अच्छा अवसर मिल रहा है। महिला वर्ष के उपलक्ष में सिलाई कढ़ाई आदि का एक नया विषय जोड़ा गया है। गृह-विज्ञान, हिंदी और नागरिक शास्त्र लेकर मैं परीक्षा दे सकूंगी। विषय भी इस बार सिर्फ चार ही लेने होंगे।"

सुलेखा ने न केवल उसकी परीक्षा की फीस दी, परीक्षा की तैयारी करवाई। काम से समय-समय पर छुट्टी देकर पूरी मदद की। उन दोनों की खुशी का ठिकाना नहीं था जब सत्तो दूसरी श्रेणी में पास हो गई। पड़ोसियों ने दोनों को सम्मान की नज़र से देखा। अब सत्तो एक प्राइमरी स्कूल में पढ़ा रही है। □